Siddhanta's International Journal of Advanced Research in Arts & Humanities
Vol. 3, No. 3, January – February 2026

वैराग्यवीरचरित महाकाव्य का दार्शनिक एवं सामाजिक चिंतन

Mrs. Veena Rani

Research Scholar, Department of Sanskrit, Baba Mastnath University, Asthal Bohar, Rohtak (Haryana)

Dr. Bablu Sharma

Assistant Professor, Department of Sanskrit, Baba Mastnath University, Asthal Bohar, Rohtak (Haryana)

इस संसार में मनुष्य को जीवन की वास्तविकता को समझने के लिए, सांसारिक आसक्तियों का त्याग करना पड़ता है तथा आत्म- साक्षात्कार के मार्ग पर चलकर ही दार्शनिक चिंतन की ओर अग्रसर हो सकता है। वैराग्य-जिसे त्याग के रूप में भी जाना जाता है। "वैराग्य का अर्थ मन की एक ऐसी अवस्था है जिसमें व्यक्ति भौतिक सुख और इच्छाओं से मुक्त हो जाता है। इसमें जीवन की क्षणभंगुरता तथा सांसारिक सुखों के बारे में कवि की गहरी समझ को प्रदर्शित करता है। यह ग्रन्थ काव्यात्मक अभिव्यक्ति से परिपूर्ण है, जिसमें जीवन की नश्वरता, मृत्यु की अनिवार्यता और भौतिक सुखों से लिप्त रहने के लिए, इसकी निरर्थकता को दर्शाने के लिए इसका दार्शनिक चिंतन किया गया है। कवि ने कितनी गम्भीर बात कही है-

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता : तयो न तप्तं वयमेव तप्ताः ॥

कालो न यातो वयमेव याताः तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा ॥ [1]

(वैराग्यशतकम् -7)

अर्थात भोगों को हमने नहीं भोगा, बल्कि भोगो ने हमें भोग लिए। तपस्या हमने नहीं की बल्कि हम खुद तप गए, समय कही नहीं गया बल्कि हम ही चले गए। इन सबके बाद भी मेरी पाने की कुछ इच्छा नहीं रही, बल्कि हम स्वयं ही जीर्ण के हो गए। इस ग्रन्थ में भी महावीर प्रसाद ने लक्ष्मण देव के चरित को इसी रूप में दर्शाया है। लक्ष्मण देव युवावस्था में क्षत्रिय संस्कारों से युक्त होने के कारण आखेट में रूचि वाला था।आखेट के प्रसंग में जीवों में भय उत्पन्न करते हुए लक्ष्मण देव ने आगे जाकर एक भयभीत हिरणी को

[1] वैराग्यशतकम् -7

देखा। मृगचर्म के इच्छुक इसने हिरणी को बाण से बींध दिया। जब उसने मृगी के शरीर से बाण खींच कर निकाला तो इस हिरनी ने अपने प्राण छोड़ दिए। लेकिन मृग चर्म के इच्छुक इसने जैसे ही उसका पेट काटा तो अत्यन्त करुण दृश्य देखने को मिला। उस गर्भवती के पेट में तीन शावक थे । जो पूर्णांग तो थे लेकिन आंखें खोलने में असमर्थ थे। थोड़ी देर बाद वे भी अपनी मृत मां के अनुगामी हो गए। उन्हें देखकर लक्ष्मणदेव का मन भी करुणा से उसी प्रकार भर गया जिस प्रकार क्रौंच पक्षी युगल में से एक का वध होने पर वाल्मीकि का मन करुणा से भर गया था।[2] उसके वज्र के समान कठोर हृदय में करुण रस का झरना प्रवाहित हो गया। वह उन मृगों के लिए देर तक शोक में डूबा रहा और अपने निन्दित कर्म पर बोला - अहो कितने कष्ट की बात है कि मैने अपने निन्दित कर्म के द्वारा अपनी आत्मा को कष्ट पहुंचाया है। अपने स्वार्थ के लिए जीव हत्या करके अपने मानव जीवन को भी निरर्थक बना दिया। मेरे इन प्राणहारी साधनों को धिक्कार है। क्योंकि यह काल सभी को नष्ट कर कर देगा। शरीर के नश्वर होने के कारण दूसरे प्राणियों की हिंसा करने से क्या लाभ। इस प्रकार वह आत्मग्लानि से भर गया । संसार के राग-रंग से दूर वैराग्य की स्थिति में आ गया।

यदि शरीर नश्वर है तो इन शस्त्रों को धारण करने से क्या प्रयोजन। इस प्रकार संसार के राग-रंग से दूर वह वैराग्य की अवस्था में आ गया-

इत्थं सुधीरः सोऽधीरो ग्लपितान्तस्तदाऽभवत् ।

विरागो जगतो रागे वैराग्ये मतिमादधौ ॥[3]

लक्ष्मणदेव ने कामादि छः शत्रुओं के साथ में ही अपने सभी शस्त्रों का त्याग कर दिया तथा अपने हृदय में वैराग्य को धारण कर लिया। जब उसे खोजते हुए उसके मित्र उसे मिलते है तो पूछते है, भाई क्या बात हो गई। तो वह बोला. - आज मेरे मन का अन्धकार नष्ट हो गया।

लक्ष्मण देव ने वैराग्य के मार्ग में प्रवेश करके तथा शस्त्रों का त्याग करके भी जीवन की क्षणभंगुरता को देखते हुए, शान्ति प्राप्त नहीं की। उसका मन प्रत्येक क्षण शावकों सहित उस मृगी को याद करता हुआ आत्मग्लानि से भर जाता । उस समय उसकी अवस्था वैसी ही हो गयी जैसे अपने मृत परिवारजन को श्मशान में छोड़कर आने के बाद मनुष्य की होती है।1[4] यह स्वजनों के अनुराग से रहित होकर मुक्ति मार्ग की खोज करता हुआ सद् प्रकृति होकर वन में बैठा रहता। परिवारजन इसे इस प्रकार भोगेच्छाओं से

[2] वाल्मिकी -रामायण

[3] वैराग्यवीरचरितम्-1.74

[4] वैराग्यवीरचरितम् -2.2

रहित तथा वैराग्य भाव से युक्त देखकर चिन्तित हो गए। पिता की आज्ञा को मानकर उसने विवाह कर लिया। लेकिन सांसारिक भोगों में उसने कोई रुचि नहीं दिखाई। क्योंकि श्रेष्ठ पुरुष भोगों से विचलित नहीं होते। एक दिन उसने सत्य-सार की खोज करते हुए संसाररूपी सरोवर को पार करने की इच्छा से घर त्याग दिया। मन और शरीर हमेशा सुतीर्थों पर आनन्द को प्राप्त करता है-

यताशिना तेन पदातिनेष्टाः, भुवः पवित्राः परितोऽवगाढाः ।

समस्तपापक्षय जायमाना, अन्वभावि भावीष्करा विरक्तिः ॥[5]

अर्थात समस्त पापों के नष्ट हो जाने से जो परिणाम मिलता है। वह सुखद विरक्ति का अनुभव होता है।

अन्त में वह अनन्त आनन्द प्राप्त करने की इच्छा से तप करने के लिए शान्त पंचवटी वन में प्रवेश कर गया। गोदावरी नदी के जल में स्नान करके अपने कामदि छः शत्रुओं को जीतकर गुरुमन्त्र का जाप करके भवसागर को पार करने की अवस्था में पहुंच गया। पंचवटी प्रदेश में तप करते हुए माधव परम सिद्धि को प्राप्त कर गया। यह वैरागी बिना कहे ही मन की बात को पूर्ण कर देता है, इसने सभी को अपने मन्त्रों से अभिभूत किया हुआ है। परिवारजनों के सब भाव उसकी स्मृति से दूर जा चुके थे। अब माधव ज्ञानमय हो गए थे-

आत्मानन्दधनस्य वा भवति किम् आकर्षण संतृतौ ।[6]

अर्थात आत्मानन्द प्राप्त करने वाले व्यक्ति का संसार मे क्या आकर्षण रहता है अर्थात- कुछ नहीं।

लोगों से एक प्रसिद्ध उदाहरण सुना जाता है-उसका कन्हैया नाम का श्रेष्ठ सेवक था। गुरु ने उसको युद्ध में प्यासे सैनिकों को जल पिलाने का कार्य सौंपा था। लेकिन वह दोनों पक्ष के सैनिकों को जल पिलाता था। सैनिकों ने इसकी शिकायत गुरु को की । गुरु ने कन्हैया को बुलाया कि आप शत्रु पक्ष के सैनिकों को जल पिला रहे हो। इस पर कन्हैया ने कहा- शायद ये सच कह रहे हैं। लेकिन जब मैं उस अकाल पुरुष का नाम लेकर जल पिलाता हूं तो मुझे सब एक समान दिखते है, किसी में कोई भेद नहीं दिखता। जो व्याकुल होकर पुकारता है। उसे जल पिला देता हूं। मै वृद्ध हो गया हूं, याददाश भी कमजोर हो गई है। मुझे तो बस आपकी आज्ञा याद रहती है कि प्यासे को जल पिलाना है। उसकी बाते सुनकर गुरु ने उसे गले लगा लिया और कहा-

[5] वैराग्यवीरचरितम्-2.20

[6] वैराग्यवीरचरितम्-2.44

अपिशास्त्रानभिज्ञा: ये जना: वैदुष्यवर्जिताः ।

सरलाः सत्यमनसो ब्रह्मज्ञानिन एव ते ॥[7]

निस्वार्थ सेवा के द्वारा तुमने ब्रह्मतत्व को प्राप्त कर लिया। तुमने यह समदृष्टि वाला ज्ञान जल सेवा से ही स्वतः मिला है।

हे माधव इसी बलिदान रूपी ज्वाला को मैं आपको सौंपना चाहता हूं। मेरा आपके पास आने का मुख्य प्रयोजन यही है-

निष्कामस्त्वं गतद्वन्द्वश्शुद्धो बुद्धो निरञ्जनः ।

युद्ध क्षेत्रं त्वया तात। मन्तव्यं सुतपोवनम् ॥[8]

अहंकार से युक्त और भोगों को भोगने वाले तथा पीड़ितो की हत्या में निपुण, यवनों द्वारा भुक्त यह नगर आज गुरु के बालकों की हत्या के भयंकर पाप के कारण नष्ट हो गया है।

कृतं स्मर, कृतं भुङ्क्ष्व कृतमेवानुगच्छति ।

कृतेनैवोच्चतां याति कृतेनाप्नोत्यधोगतिम् ॥[9]

मातृभूमि आपको बुला रही है, अपने तेज से इसे शरण्या और सुखदा बनाओ। माधवदास ने गुरु से कहा- मेरा शरीर और मन आपके अधीन है, आपका यह कहना उचित होगा कि-'यह मेरा आदेश है एवं आप ऐसा करो। दुष्टों का नाश करने के लिए चिरकाल से त्यागे हुए शस्त्रों को में फिर से धारण करुंगा । गुरु ने उसे छः गुण बताए - राजनीति, मित्र और शत्रु का भेद, विशेष स्थान, सैन्य संगठन, साधनों के स्रोत, शस्त्र प्राप्त करने के उपाय, विशेष मन्त्रणा योग्य लोगों के नाम तथा उसे अपना आशीर्वाद दिया। इन दोनों को एक साथ देखकर प्रकृति की सब प्रकार की उपमाएं मानो फीकी पड़ रही थी। चिन्तित होकर इनके अनुयायी इनको खोजने में लगे हुए थे। अचानक हो उन्हें देखकर 'सत् श्री अकाल' की घोषणा के साथ ही ये आश्रम में प्रवेश कर गए।

वैरागी सम्प्रदाय में भी बहुत से साधु गृहस्थ जीवन का निर्वाह करते हैं।

---

[7] वै०च०-4.86

[8] वै०च०-4.92

[9] वै०च०- 6.143

वैरागी होने पर भी रणक्षेत्र में अपना कर्तव्य समझकर उतरे हो। वैसे ही आपका एक कर्त्तव्य अभी बाकी है। वैरागी ने सोचा ऐसे वैराग्य से क्या प्रयोजन, जिसका कोई कर्त्तव्य शेष हो। वैरागी का पश्चाताप् था या पुनर्बोध । जो उसने सुन्दरी से मिलने की शीघ्र ही इच्छा जाहिर की। घर के पीछे उपवन में सुन्दरी की खोज करने पर वह देवदार के वृक्ष के नीचे अपने भाग्य के समान कठोर पाषाण पर बैठी हुई थी। वह समस्त अंलकारों से रहित, शान्त और निश्चल थी। वैरागी अपराधी के समान उसके पीछे खड़ा है तथा सामने जाने के लिए साहस नहीं जुटा पा रहा। उसे जैसे ही किसी की उपस्थिति की भनक लगी, वह आसन से उठ खड़ी हुई। तब माधव ने हाथ जोड़ कर कहा- लक्ष्मण देव के अपराध के लिए यह वैरागी आपसे क्षमा याचना कर रहा है। किसी कारणवश यहां आने पर आपके पिता के द्वारा सारा वृतान्त जानकर में पश्चाताप से भर गया हूं। अब आप जैसा कहोगी मैं वैसा ही करूगां। तब सुन्दरी भी अश्रुधारा को प्रवाहित करती हुई, मानो मन से पवित्र हो गई। फिर माधव सुन्दरी को उसके पिता के पास ले गया। पिता बोले- आज का दिन अत्यन्त सौभाग्यशाली है, यह मेरे पुण्यों का ही फल है। जो आज आपका मिलन हुआ है। उसने अपनी पुत्री से कहा कि तुम्हारा पति कोई सामान्य व्यक्ति नहीं है और वैरागी से कहा- आपका कोई व्रत भंग नहीं हुआ है। क्योंकि वैरागी मत के प्रथम-प्रवर्तक दादूदयाल भी गृहस्थ थे । जिस वैरागी को धर्म की रक्षा के लिए शुरू में गोदावरी के तट से लाकर धनुष, तलवार सौंपकर धर्म की रक्षा के लिए प्रेरित किया था। उन्होंने अपना कर्त्तव्यपूर्ण किया है। इसने अनेक कष्ट सहकर अपने स्वाभिमान की रक्षा की। यवनों ने दोबारा हिन्दूओं पर अत्याचार करने आरम्भ कर दिए। इन दोनों के बिना खालसा अनाथ हो गया। सैय्यद बन्धुओं ने फर्रुख की हत्या करवा दी। सत्रहवीं शताब्दी में तीन महापुरूष हुए, जिन्होंने अपना सर्वस्व देश और धर्म के लिए न्यौछावर कर दिया। प्रथम गुरु तेगबहादुर, द्वितीय गुरु गोबिन्द सिंह तथा तृतीय यह वीर वैरागी जिसने अपने पुत्रों सहित राष्ट्रयज्ञ में आहति दे दी।[10]

[10] वै॰च॰-12.119